P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-6* February- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

बुद्ध एवं समाज कल्याण

सारांश

वर्तमान शोध–पत्र में भगवान बुध्द के द्वारा समाज कल्याण हेतु किये गए प्रावधानों के बारे में चर्चा की गई है। मानव जीवन अनेक दुःखों यथा– जरा– मरण, नैराश्य, शोक इत्यादि से भरा हुआ है, इन दुःखों का कोई न कोई कारण अवष्य है। बुध्द ने दुःखों का कारण अविद्या को माना है और इन दुःखों से मुक्त होने का उपाय भी बताया है । संसार में व्याप्त दुःख, दुःखों का कारण एवं बुध्द द्वारा बताए गये दुःख निवारण के मार्गों पर चर्चा इस शोधपत्र में विस्तार पूर्वक की गई है।

मुख्य शब्द : बुद्ध, समाज कल्याण।

छविलाल
प्रवक्ता,
शिक्षा संकाय,
दयालबाग एजूकेशनल इन्स्टीट्यूट,
डीम्ड विश्वविद्यालय,
दयालबाग, आगरा, उत्तर प्रदेश, भारत

प्रस्तावना

ईसा से पूर्व सातवीं शताब्दी में वैदिक काल के हिन्दू धर्म कर्म में कुछ दोष आने लगे। वास्तविक धर्म का लोप होने लगा। हिन्दू धर्म में दम्भ प्रवेश कर गया। कर्मकाण्ड को ही लोग धर्म मानने लगे। यज्ञ के नाम पर पशुबलि दी जाने लगी, तपस्या के नाम पर लोग गृह त्याग कर वनों में मारे–मारे फिरने लगे। तपस्या के साधनों के नाम पर शारीरिक यातनाओं के आविष्कार हो गये। ऐसी अन्धकारमयी स्थिति में ज्योति दिखलाने वाला एक क्षत्रिय राजकुमार था जिसको कि गौतमबुद्ध के नाम से जानते हैं।

महात्मा बुद्ध का कहना था कि बलि और यज्ञ से जीव–हिंसा होती है तथा व्यर्थ का धन व्यय होता है अतः इस प्रथा को समाप्त करो। यदि वेद अपौरूषेय नहीं हैं तो उन्हें भी अन्य पुस्तकों की भाँति समझो। अपना सम्पूर्ण यौवन वेदों को कण्ठस्थ करने में नष्ट कर देना मूर्खता है। तपस्या के द्वारा शरीर सुखाना व्यर्थ है। भगवान बुद्ध ने ऐसे धर्म सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया जो प्रत्यक्ष जीवन की वास्तविक समस्याओं का विश्लेषण करके धर्म का एक व्यावहारिक रूप प्रस्तुत करे। वे समझते थे कि संसार दुःखमय है अतः उसका त्याग करके मोक्ष या निर्वाण प्राप्त करना ही मानव जीवन का उद्देश्य है।

शोध अध्ययन के उद्देश्य

प्रस्तुत शोध अध्ययन के मुख्य उद्देश्य निम्नवत हैं–

- समाज को बुध्द की शिक्षाओं से परिचित कराना।
- समाज को मानव जीवन के अन्तिम उद्देश्य से परिचित कराना।

चार आर्य सत्य

जरा, रोग तथा मृत्यु के दृश्यों ने सिद्धार्थ के अन्तःकरण को झकझोर दिया था। इन कष्टों से छुटकारा पाने के उपायों को जानने के लिए उन्होंने कठोर तप किया और ज्ञान प्राप्त किया। तभी से सिद्धार्थ ''बुद्ध'' कहलाये। बुद्ध को जो ज्ञान प्राप्त हुआ और जो कुछ उपदेश उन्होंने मानव कल्याण हेतु दिये उनका सार चार सत्यों में निहित है। चार आर्य सत्य ये हैं–

1. सांसारिक जीवन दुःखों से परिपूर्ण है।
2. दुःखों का कारण है।
3. दुःखों का अन्त संभव है।
4. दुःखों के अन्त का उपाय है।

इन्हें क्रमशः दुःख, दुःख समुदाय, दुःख निरोध तथा दुःख निरोध मार्ग कहते हैं।

जब सिद्धार्थ बुद्ध हुए तो वे इस निश्कर्ष पर पहुँचे कि मानव तथा मानवेत्तर जीवन सभी दुःख से परिपूर्ण हैं। जन्म, जरा, रोग, मृत्यु, शोक, आकांक्षा, नैराश्य सभी आसक्ति से उत्पन्न होते हैं अतः ये सभी दुःख हैं। अप्रिय का संयोग, प्रिय का वियोग दुःखदायी है। इच्छा की पूर्ति न होना, जय–पराजय भी दुःखदायी है। बुद्ध ने यहाँ तक कह दिया था कि सुख भी वास्तव में दुःख ही है।

महात्मा बुद्ध ने प्रतीव्य–समुत्पाद के अनुसार दुःख के कारण को जानने का प्रयत्न किया है। प्रतीव्य समुत्पाद के अनुसार संसार का कोई भी विषय बिना कारण नहीं है। सभी के कुछ न कुछ कारण हैं। अतः जब तक कोई कारण नहीं होगा तब तक दुःख की उत्पत्ति नहीं हो सकती। जीवन में अनेक दुःख हैं– यथा– जरा– मरण, नैराश्य, शोक इत्यादि। जीवन के दुःखों का सांकेतिक नाम जरा मरण है।

बुद्ध ने बताया कि शरीर धारण करना ही जरा–मरण का कारण है। शरीर– धारण न हो तो जरा–मरण नहीं हो सकता है अर्थात् जन्म–ग्रहण या जाति ही दुःख का कारण है। जन्म का कारण भव है यहाँ जन्म गृहण करने की प्रवृत्ति को भव कहा जा सकता है। इस प्रवृत्ति का क्या कारण है ? सांसारिक विषयों के प्रति जो हमारा उपादान अर्थात् लिपटे रहने की अभिलाषा है वही हमारी जन्म–प्रवृत्ति का कारण हैं। यह उपादान भी हमारी तृष्णाओं अर्थात् शब्द, स्पर्श आदि विषय–भोग करने की वासनाओं के कारण होता है। किन्तु यह तृष्णा कहाँ से आती है? तृष्णा का कारण हमारा पहले का विषय भोग है अर्थात् इन्द्रियों के द्वारा जो हमें वेदना अर्थात् सुखानुभूति होती है, उसी से हमारी तृष्णा जगी रहती है। अतः तृष्णा का कारण वेदना है। किन्तु वेदना या इंद्रियानुभूति बिना इंद्रिय स्पर्श के नहीं हो सकती अर्थात् इन्द्रियों का विषयों के साथ संपर्क आवश्यक है। अतः वेदना के लिए स्पर्श आवश्यक है। स्पर्श भी बिना ज्ञानेन्द्रियों के नहीं हो सकता।

अतः स्पर्श के लिए पाँच इन्द्रिय तथा मन आवश्यक हैं। पाँच इन्द्रियों तथा मन के समूह को षडायतन कहते हैं। यदि गर्भस्थ शरीर तथा मन न हों तो षडायतन का अस्तित्व ही संभव नहीं है। गर्भस्थ भ्रूण के शरीर और मन को नामरूप कहते हैं। यदि गर्भावस्था में चैतन्य या विज्ञान न हो तो नाम रूप की वृद्धि ही नहीं हो सकती किन्तु गर्भावस्था में विज्ञान की संभावना तभी हो सकती है जब पूर्व जन्म के कुछ संस्कार रहें। अकस्मात् विज्ञान संभव नहीं हो सकता है। पूर्व– जन्म की अन्तिम अवस्था में मनुष्य के पूर्ववर्ती सभी कर्मों का प्रभाव रहता है। कर्मों के अनुसार जो संस्कार बनते हैं उसका कारण है अविद्या। क्षणिक, दुःखद, असार एवं हेय विषयों को स्थायी, सुखद, सार तथा उपादेय समझ लेना ही अविद्या या मिथ्या ज्ञान है। यही जन्म का मूल कारण है। प्रतीव्य समुत्पाद के आधार पर दुःख हेतु की खोज करते हुए बुद्ध ने द्वादश निदान का निरूपण किया है–

1. अविद्या
2. संस्कार,
3. विज्ञान
4. नामरूप
5. षडायतन
6. स्पर्श
7. वेदना
8. तृष्णा
9. उपादान
10. भव
11. जाति
12. जरा–मरण

ये द्वादश निदान हमारे भूत, वर्तमान तथा भविष्य के जीवनों में व्याप्त हैं।

द्वितीय आर्य–सत्य से स्पष्ट है कि दुःख का कारण है। अतः दुःख के कारण का यदि अंत हो जाए तो दुःख का अंत भी संभव है। दुःख–नाश या दुःख निरोध की अवस्था का ठीक–ठीक ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है। दुःख निरोध को निर्माण कहते हैं।

अष्टांगिक मार्ग

अन्तिम आर्य सत्य में भगवान बौद्ध ने निर्वाण प्राप्ति के लिए जिस मार्ग को लोगों के सामने रखा उसके आठ अंग हैं। इसलिए इसे 'अष्टांगिक मार्ग' कहते हैं। यही बोद्ध धर्म का सार है, यह गृहस्थ और सन्यासी सभी के लिए है इस मार्ग के आठ अंग इस प्रकार है–

1. सम्यग् दृष्टि (सम्मादिट्ठि)
2. सम्यक्–संकल्प (सम्मासंकल्प)
3. सम्यक्–वाक् (सम्मावाचा),
4. सम्यक्–कर्मांत (सम्माकम्मांत)
5. सम्यगाजीव (सम्मा–आजीव),
6. सम्यग्–व्यायाम (सम्मावायाम)
7. सम्यक्–स्मृति (सम्मासत्ति)
8. सम्यक्–समाधि (सम्मासमाधि)

अविद्या के कारण आत्मा तथा संसार के सम्बन्ध में मिथ्या–दृष्टि की उत्पत्ति होती है, और हम अनित्य, दुःखद और अनात्म को नित्य, सुखद और आत्मरूप समझ बैठते हैं। इस दृष्टि को छोड़कर वस्तुओं के यथार्थ स्वरूप पर सतत् ध्यान रखना चाहिए। इसी को सम्यर्ग–दृष्टि कहते हैं।

जो निर्वाण चाहते हैं उन्हें सांसारिक विषयों की आसक्ति, दूसरों के प्रति द्वेष और हिंसा– इन तीनों को परित्याग करने का संकल्प करना चाहिए। इन्हीं का नाम सम्यक्–संकल्प है।

सम्यक्–संकल्प केवल मानसिक नहीं होना चाहिए वरं उसे कार्य रूप में परिणित भी होना चाहिए। सम्यक्–संकल्प के द्वारा सबसे पहले हमारे वचन का नियंत्रण होना चाहिए। अर्थात् मिथ्यावादिता, निंदा, अप्रिय वचन तथा वाचालता से बचना चाहिए। सम्यक्–संकल्प को कर्म में भी परिणित करना चाहिए अर्थात् अहिंसा, अस्तेय तथा इंद्रिय–संयम ही सम्यक्–कर्मांत हैं। बुरे वचन तथा कर्म का परित्याग करने के साथ–साथ मनुष्य को शुद्ध उपाय से जीविकोपार्जन करना चाहिए।

इस बात का निरन्तर प्रयत्न करना आवश्यक है कि पुराने बुरे कर्मों का पूरी तरह नाश हो जाय और नये बुरे भाव भी मन में न आवें। इन शुभ विचारों को मन में धारण करने के लिए सतत चेष्टा करनी चाहिए।

इस मार्ग में चलने के लिए निरन्तर सतर्क रहना चाहिए। शरीर को शरीर, वेदना को वेदना, चित्त को चित्त और मानसिक अवस्था को मानसिक अवस्था रूप में ही चिंतन करते रहना आवश्यक है।

उपर्युक्त सात नियमों के अनुसार चलकर जो मनुष्य अपनी बुरी चित्त वृत्तियों को दूर कर लेता है वह सम्यक्–समाधि में प्रविष्ट होने के योग्य हो जाता है और अन्ततः निर्वाण की प्राप्ति कर लेता है।

निष्कर्ष

इस प्रकार हम इस निष्कर्ष पर पहुचते हैं कि भगवान बुद्ध के हृदय में दुःख से पीड़ित मानव के लिए करूणा का संचार हुआ और वे लोककल्याण के कार्य में लग गये। जिस नौका के द्वारा उन्होंने स्वयं दुःख समुद्र को पार किया था उसको नष्ट कर देना उचित नहीं समझा, बल्कि उन्होंने उसे जीवों अर्थात् समाज के कल्याण में लगा दिया। बुध्द द्वारा बताये गये मार्गों का यदि अनुसरण करे तो न केवल वह अपना कल्याण प्राप्त करेगा बल्कि सम्पूर्ण समाज उससे कल्याण को प्रप्त होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची

चटर्जी व दत्त (1984) , 'भारतीय दर्षन',पुस्तक भंडार पब्लिशिंग हाउस, पटना।

Damien Keown (2013). Buddhism: A Very Short Introduction. Oxford University Press. (Chapter 4: The Four Noble Truths). ISBN 978-0-19-966383-5

Carol Anderson (2004). Robert E Buswell Jr (ed.). Encyclopedia of Buddhism. MacMillan Reference, Thomson Gale. ISBN 0-02-865718-7

Bhikkhu Bodhi (2000), The Connected Discourses of the Buddha: A New Translation of the Samyutta Nikaya, Wisdom Publications, Boston: ISBN 0-86171-331-1

Rahula, Walpola (2007), What the Buddha Taught, Grove Press, New York City, New York.

Stephen J. Laumakis (2008). An Introduction to Buddhist Philosophy. Cambridge University Press.. ISBN 978-1-139-46966-1.

Kalupahana, David J. (1992), A history of Buddhist philosophy, Motilal Banarsidass Publishers Private Limited, Delhi.